जोबनेर कृषि

श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय

जोबनेर, जिला–जयपुर (राज.) 303 329

जुलाई, 2020 वर्ष : 5 अंक : 4 प्रति अंक मूल्य 5 रुपये वार्षिक शुल्क : 50 रुपये

गुणवत्ता युक्त बीज उत्पादन के लिए उड़द में रोग प्रबन्धन

मनोहरी लाल मीना, रवि कुमार मीना एवं उदल सिंह

कृषि महाविद्यालय, लालसोट (दौसा)

भारत में उड़द, दलहन की एक महत्वपूर्ण फसल है। यह शाकाहारी जनसंख्या के लिए प्रोटीन, खनिजों एवं विटामिनों का एक प्रमुख स्रोत है। इसमें फॉस्फेरिक अम्ल प्रचुर मात्रा में पाया जाता है। गुणवत्तायुक्त बीज उत्पादन के लिए स्वस्थ फसल महत्व निर्विवादित है। इस फसल में कवक, जीवाणु एवं विषाणु द्वारा अनेक रोग उत्पन्न होते हैं। उड़द का गुणवत्ता युक्त बीज के लिए फसल में निम्नांकित रोगों का उचित प्रबन्धन करना आवश्यक है।

श्यामवर्ण रोग

यह रोग कोलेटोट्राइकम लिण्डेमुथियानम कवक की वजह से होता है। यह कवक पौधें के भूमि के ऊपर वाले सभी भागों पर आक्रमण करता है तथा बढ़वार के किसी भी समय हो सकता है। इस रोग में गहरे रंग के केन्द्र व चमकीले लाल व नारंगी रंग के किनारों वाले काले गोलाकार धंसे हुये धब्बे पत्तियों तथा फलियों पर बनते हैं। गम्भीर संक्रमण में प्रभावित भाग फट जाते है। बीज अंकुरण के तुरन्त बाद होने वाले संक्रमण में प्रभावित नव अंकुरित पौधें झुलस जाते हैं। रोगकारक बीज एवं पादप अवशेषों पर उत्तरजीवीत होता है। ठण्डे एवं आर्द्र मौसम में यह रोग अधिक भंयकर होता है।

प्रबन्धन :

बीजों को कार्बेन्डाजिम (2 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज की दर) से उपचारित करना चाहिए। पादप अवशेषों को एकत्र करके उन्हें नष्ट कर देना चाहिए। मैन्कोजेब (2 ग्राम प्रति लीटर) अथवा कार्बेन्डाजिम (1 ग्राम प्रति लीटर) का छिड़काव करना चाहिए।

जीवाणु पत्ती झुलसा रोग :

यह रोग जैन्थामोनास फैजियालाई नामक जीवाणु द्वारा होता है। इस रोग में पत्तियों की सतह पर भूरे सूखे एवं उभरे हुये धब्बे बन जाते हैं। इन उभरे हुये धब्बों के बनने के कारण पत्तियों की निचली सतह लाल रंग की दिखाई पड़ती है। तने एवं फलियां भी संक्रमित हो जाती है। यह जीवाणु बीज जनित है। वर्षा के छीटें इस रोग के विकास एवं फैलाव में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

प्रबन्धन :

रोगरहित बीज का प्रयोग करना चाहिए। पादप अवशेषों को एकत्र करके उन्हें नष्ट कर देना चाहिए। बीज को बुवाई के पूर्व 500 पीपीएम स्ट्रेप्टोसाइक्लिन के घोल में 30 मिनट तक डुबोना चाहिए। उसके उपरान्त खेत में स्ट्रेप्टासाइक्लिन (250 पी.पी.एम.) व कॉपर ऑक्सीक्लोराइड (3 ग्राम प्रति लीटर की दर से) 10–15 दिन के अन्तराल पर दो बार छिड़काव करना चाहिए।

सरकोस्पोरा पत्ती धब्बा रोग :

यह रोग सरकोस्पोरा कैनेसैन्स कवक की वजह से होता है। इस रोग में पत्तियों पर छोटे व संख्या में बहुत अधिक, पीले भूरे रंग के केन्द्र व लाल रंग के किनारों वाले धब्बे बनते हैं। इसी प्रकार के धब्बे शाखाओं व फलियों पर भी बनते है। रोग के अनुकूल वातवारण के होने पर फूल आने व फली बनने के समय पत्तियों पर अत्यधिक धब्बे बनते है व पत्तियां झड़ जाती है। इन उभरे हुये धब्बों के बनने के कारण पत्तियों की निचली सतह लाल रंग की दिखाई पड़ती है। तने व फलियां भी संक्रमित हो जाती है। यह जीवाणु बीजजनित है। वर्षा के छींटे इस रोग के विकास एवं फैलाव में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

प्रबन्धन :

उच्च बढ़वार वाली धान्य एवं मिलेट्स एवं मोटे अनाज की फसल के साथ अन्तः फसल लेवें। रोग मुक्त बीज का प्रयोग करना चाहिए उचित पादप संख्या को अपनाना चाहिए व लाईन से लाईन की उचित दूरी बनाए रखना चाहिए। मल्चिंग रोग विस्तार को कम करके उपज को बढ़ाने में सहायक होती है। कार्बेन्डाजिम (1 ग्राम प्रति लीटर) अथवा मैन्कोजेब (2.5 ग्राम प्रति लीटर) का बुवाई के 30 दिनों बाद छिड़काव करना चाहिए।

छाछ्या रोग :

यह रोग ऐरिसाइफी पॉलीगोनी नामक फफूंद के द्वारा होता हैं चूर्णिल आसिता रोग होने पर पत्तियों की ऊपरी सतह व

अन्य हरे भागों पर सफेद चूर्ण दिखाई देता है। प्रभावित भाग धूंधले रंग के हो जाते है। गम्भीर रूप से प्रभावित भाग झुरी युक्त होकर विकृत हो जाते है। डण्ठल एवं शाखायें भी इस सफेद फफूंद की वृद्धि से ढ़क जाती है। गम्भीर संक्रमण होने पर ग्रसित पत्तियां पीली पड़ कर मुड़ने लगती है और परिपक्व होने से पहले ही झड़ जाती है। यह रोग पौधों में जल्दी परिपक्वता उत्पन्न करता है जिससे उपज में भारी नुकसान होता है।

प्रबन्धन :

बीज की अगेती बुवाई जून में कर देनी चाहिए ताकि फसल पर रोग के अगेते विस्तार से बचा जा सके। चूर्णिल आसिता रोग के नियन्त्रण हेतु डाइनोकेप (1 मिली. प्रति लीटर) घुलनशील सल्फर (2.5 से 3.0 ग्राम प्रति लीटर) 20 दिन के अन्तराल पर तीन बार छिड़काव करना चाहिए।

जड़ गलन रोग :

यह रोग राइजोक्टोनिया सोलैनी नामक कवक द्वारा होता है। यह रोग कारक मूंग/उड़द में बीज गलन, जड़ गलन, आर्द्र गलन, तने का कैन्सर और पत्ती झुलसा रोग उत्पन्न करता है। यह रोग सामान्यताः फली बनने की अवस्था में आता है। प्रारम्भिक अवस्था में फफूंद बीज गलन, बीजांकुर झुलसा व जड़ गलन के लक्षण उत्पन्न करता है। प्रभावित पत्तियां पीली पड़ जाती है व पत्तियां पर भूरे रंग के अनियमित चकते उभर आते हैं। इन चकतों के मिलने पर बड़े चकते बनते है और प्रभावित पत्तियां परिपक्व होने से पूर्व ही सूखने लगती है। जड़ व तने का भूमि के समीप वाला भाग काले रंग का हो जाता है और उनकी छाल आसानी से उतर जाती है। प्रभावित पौधें धीरे–धीरे सूखने लगते है। जब प्रभावित पौधों की जकड़ा जड़ को चीर कर देखने है तो अन्दर के ऊत्तकों में लालिमा दिखाई देती है। यह रोगकारक मृदा जनित है।

प्रबन्धन :

इस रोग के नियन्त्रण के लिए ट्राइकोडर्मा विरिडी (4 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज की दर) से बीजोपचार करना चाहिए। खड़ी फसल में कार्बेन्डाजिम + मैकोजेब (2 ग्राम प्रति लीटर) का 15 दिन के अन्तराल पर दो छिड़काव करें।

रोली अथवा रतुआ रोग

इस रोग यूरोमाइसिस फैजियोलि नामक कवक द्वारा होता है। यह रोग गोल लाल भूरे रंग के छालों के रूप में प्रकट होता है। ये छाले पत्तियों की निचली सतह पर फलियों पर कम व थोड़े बहुत तनों पर बनते है। जब पत्तियों पर गम्भीर संक्रमण हाता है तो उनकी दोनों सतह पूरी रोली के छालों से आच्छादित हो जाती है। पत्तियों के झुरी पड़ने के बाद झड़ जाने के कारण उपज में भारी कमी हो जाती है।

प्रबन्धन :

गंधक (2.5 ग्राम प्रति लीटर) या मैन्कोजेब (2.5 ग्राम प्रति लीटर) का छिड़काव करना चाहिए।

तने का कैन्कर रोग :

यह रोग मैक्रोफोमिना फैजियोलिना नामक कवक द्वारा होता है। इस रोग के लक्षण तनों के आधार पर उभरे हुये सफेद कैन्कर के धब्बों के रूप में उड़द की सप्ताह की फसल पर दिखाई देते है। ये धब्बे धीरे–धीरे बढ़कर ऊपर की ओर फैलती हुई बादामी धारियों में बदल जाते हैं। प्रभावित पौधे बौने रह जाते है। पत्तियां गहरे हरे रंग की चित्तीदार व छोटे आकार की हो जाती है। प्रभावित पौधों की आसामान्य पत्तियां अचानक सुखकर गिर जाती है। पौधों में फूल आने व फली बनने में भारी कमी आ जाती है।

प्रबन्धन :

गर्मी में गहरी जुताई करनी चाहिए। फसल चक्र का पालन करना चाहिए। मृदा में सड़ी हुई गोबर की खाद (12.5 टन प्रति हैक्टर) मिलाने पर रोग में कमी होती है। रोगी पौधों के अवशेषों को जलाकर अथवा भूमि में दबाकर नष्ट कर देना चाहिए। इस रोग के नियन्त्रण के लिए ट्राइकोडर्मा विरिडी (4 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज) या स्यूडोमोनास फ्लोरेसेन्स (10 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज) अथवा कार्बेन्डाजिम या थाइराम (2 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज) की दर से बीजोपचार करना चाहिए। रोगी पौधें के पास कार्बेन्डाजिम (1 ग्राम प्रति लीटर) या ट्राइकोडर्मा विरिडी या स्यूडोमोनास फ्लोरेसोन्स (2.5 किलोग्राम प्रति हैक्टर) 50 किलोग्राम गोबर की खाद के साथ मिलाकर ड्रेचिंग करना चाहिए।

पीला मौजेक रोग :

यह एक विषाणु जनित रोग हैं यह रोग मूंगबीन मौजेक विषाणु द्वारा होता है। यह रोग मूंग की अपेक्षा उड़द में काफी आता है। शुरूआत में नई पत्तियों पर बिखरे हुए हल्के पीले रंग के छोटे धब्बे दिखाई देते हैं। शीर्ष से निकले त्रिपत्रक पर एक के बाद एक हरे व पीले धब्बे दिखाई देते है। धब्बे धीरे–धीरे आकार बढ़ते है और अन्त में कुछ पत्तियां पूरी तरह पीली हो जाती है। ग्रसित पत्तियां ऊत्तकक्षय लक्षण भी प्रदर्शित करती है। रोगी पौधे बौने रह जाते है वे देरी से पकते है और उन पर बहुत कम फूल व फलियां लगती है। रोग ग्रसित पौधों की फलियों का आकार कम रह जाता है और वे पीले रंग की हो जाती है। यह रोग सफेद मक्खी द्वारा फैलाया जाता है।

प्रबन्धन :

क्षेत्र विशेष के लिए अनुमोदित रोग प्रतिरोधी, रोग सहिष्णु प्रजातियों को उगाना चाहिए। ज्वार की 7 पंक्तियों को बॉर्डर फसल के रूप में उगाना चाहिए। सफेद मक्खी की रोकथाम हेतु डाइमिथोएट (1.5 मिली. प्रति लीटर) का छिड़काव करना चाहिए।

पत्ती मरोड़ रोग :

यह रोग लीफ क्रिन्कल विषाणु द्वारा होता है। रोग के शुरूआती लक्षण नई पत्तियों पर पार्श्व शिराओं व पत्ती के किनारे के पास उसकी सहायक शिराओं के पास हरिमाहीनता के रूप दिखाई देते है। पत्तियों के किनारे नीचे की ओर मुड़ने लगते है। कुठ

पत्तियां ऐंठने लगती है। शिराओं की निचली सतह पर लाल भूरे रंग के धब्बे दिखाई देते है जो वृन्त पेटियोल तक फैल जाते है। बुवाई के 5 सप्ताह के अन्दर लक्षण प्रदर्शित करने वाले पौधे असमान रूप से बौने रह जाते है। और इनमें अधिकांशतः ऊत्तकक्षय के कारण एक या दो सप्ताह में मर जाते हैं। देरी से आने वाले संक्रमण में पौधें की पत्तियों में गम्भीर मरोड़ या ऐंठन के लक्षण नहीं दिखते ब्लकि पत्तियों की सतह पर कहीं भी सुस्पष्ट शिरा हरिमाहीनता दिखाई देती है। खेत में रोग मुख्यतः बीज अथवा रोगी पत्तियों की स्वस्थ पत्तियों पर आपस में रगड़ से फैलता है।

प्रबन्धन :

रोग ग्रसित पौधों का 45 दिनों तक सामायिक उन्मूलन। रोग वाहक का नियंत्रण करने हेतु एसिफेट (1 ग्राम प्रति लीटर) अथवा डायमेथोयेट (1.5 मिली. प्रति लीटर) का छिड़काव करना चाहिए।

जालयुक्त झुलसा (वेब ब्लाइट रोग) :

यह रोग राइजोक्टोहनया सोलेनी नामक कवक द्वारा होता है। इस रोग के लक्षण पौधों के सभी भागों जैसे जड़, तना, वृन्त और फलियों पर बनते है किन्तू यह रोग पर्ण समूह पर विनाशकारी होता है। रोगजनक बीजजनित एवं मृदाजनित होता है। पादप वृद्धि के दूसरे से तीसरे सप्ताह में यह रोग बीजांकुर की मृत्यु कर देता है। अंकुरण पूर्व व अंकुरण पश्चात् बीजांकुरों की मृत्यु हो जाती है एवं बीज सड़ जाते हैं। रोग के प्रथम लक्षण छोटे, गोल भूरे धब्बों के रूप में पहली पत्तियों पर दिखाई पड़ते हैं। ये धब्बे बढ़ जाते हैं जो प्रायः सकेन्द्री पट्टियों और असमान जलासक्ति क्षेत्र से घिरा दिखाई देते है। ये क्षत धब्बे विस्तार करके मिल जाते हैं और सफेद कवकजाल की वृद्धि को पत्तियों की निचली सतह व नई कोमल शाखाओं पर देखा जा सकता है। रोग ग्रसित पत्तियों पर कवकजाल मकड़ी के जाले की भांति दिखाई देता है। इसलिए इस रोग का नाम जालयुक्त झुलसा (वेब ब्लाइट) रोग रखा गया है।

प्रबन्धन :

कार्बेन्डाजिम (1 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज) का प्रयोग इस रोग के बीज जनित संक्रमण को नष्ट करने में प्रभावशाली है। ट्राइकोडर्मा विरिडी इस रोगजनक के जैविक नियंत्रण में प्रभावकारी है।

किसानों की आय वृद्धि में सहायक मूंगफली की खेती

बनवारीलाल जाट, रामजीलाल मीना एवं सुनिता कुमारी
कृषि विज्ञान केन्द्र, दौसा (राजस्थान) 303303

मूंगफली राजस्थान की प्रमुख तिलहनी फसल है। दौसा जिलें में मूंगफली प्रमुख खरीफ तिलहन फसल है। वर्ष 2019 में दौसा जिले में 10416 हैक्टर क्षेत्रफल में 12603 मैट्रिक टन मूंगफली का उत्पादन हुआ। इस प्रकार दौसा जिले में मूंगफली की उत्पादकता 12.10 किलोग्राम प्रति हैक्टर रही। मूंगफली पोषण की दृष्टि से भी महत्वपूर्ण फसल है। 100 ग्राम मूंगफली से लगभग 567 कैलोरी ऊर्जा प्राप्त होती है। इसमें 40–45 प्रतिशत वसा की मात्रा होती है। प्रोटीन का भी अच्छा स्रोत है। दौसा जिले में लालसोट क्षेत्र में सर्वाधिक मूंगफली बोई जाती है। मूंगफली उत्पादन में जिले में प्रमुख रूप से दो समस्याएं आती है। पहली कॉलर रोट जिसे स्थानीय भाषा में गलकट रोग भी कहते हैं तथा दूसरी सफेद लट जिसे गोजा लट के नाम से भी जाना जाता है। जिले के लालसोट क्षेत्र के रालावास, डूँगलपुर, सलेमपुरा, ढोलावास, पातलवास गाँवों के किसानों ने इन दोनों ही समस्याओं से बचाव हेतु कृषि विज्ञान केन्द्र द्वारा सुझाव को अपनाते हुए अगेती बुआई शुरू की। कृषि विज्ञान केन्द्र द्वारा इस क्षेत्र में टी.जी. 37ए के प्रदर्शन लगाकर सफेद लट तथा अन्य कीट तथा बीमारियों के बारे में प्रदर्शन, भ्रमण, प्रशिक्षण तथा प्रक्षेत्र दिवस के माध्यम से लगातार किसानों को जागृत किया गया। परिणाम स्वरूप इस क्षेत्र के किसानों द्वारा सफेद लट एवं कॉलर रोट से बचाव हेतु टी.जी. 37ए किस्म जिसे स्थानीय भाषा में लोढ़ा मूंगफली भी कहते है मई के मध्य तक बुवाई कर देते हैं एवं सितम्बर के प्रथम सप्ताह में ही कच्ची मूंगफली को उखाड़कर पौधों से अलग कर स्थानीय बाजार में लगभग 40–45 रुपये प्रति किलो की दर से बेच देते हैं। इस प्रकार सें सफेद लट एवं कॉलर रोट के प्रकोप के समय तक मूंगफली को खेत से उखाड़कर बाजार में बेच दिया जाता है तथा पशुओं के लिए चारा भी उपलब्ध हो जाता है। कच्ची मूंगफली से किसानों की आमदनी में अच्छी खासी बढ़ोतरी हो रही है साथ ही मूंगफली की फसल सफेद लट एवं कॉलर रोट के प्रकोप से भी बच जाती है।

वर्ष 2022 तक किसानों की आय दुगुनी करने के क्रम में यह एक अहम कदम है। इस प्रकार बुआई के समय में बदलाव कर सफेद लट एवं कॉलर रोट से बचाव तो होता है ही साथ ही प्रति हैक्टर आमदनी में भी बढ़ोतरी होती है। इस विधि से मूंगफली केवल उन्हीं क्षेत्रों में पैदा की जा सकती है जहाँ सिंचाई की सुविधा उपलब्ध हो।

मूंगफली की तीन प्रकार की किस्में होती है विस्तारी, अर्ध विस्तारी एवं झुमका किस्म जो भूमि के अनुसार बोने के काम में ली जाती है–

विस्तारी किस्में :-आर.जी382 (दुर्गा), एक.–13, आर.जी.510 (राज. मूंगफली), जी.जे.जी. 19।

अर्ध विस्तारी किस्में :-गिरनार–2, आर.जी.425 (राज. दुर्गा), आर. जी. 559–3 (राज. मूंगफली–3)।

झुमका किस्में :-टी.जी.37ए, ए.के. 12–24ए जे.एल. 24।

बीज उपचार-गलकट (कॉलर रोट) से बचाव के लिए बुवाई से

पहले कार्बोक्सिन 37.5 प्रतिशत एवं थाइरम 37.5 प्रतिशत (विटावेक्स पावर) 3 ग्राम या 10 ग्राम ट्राइकोडर्मा प्रति किलो बीज की दर से मिलाकर उपचारित करें। इसके साथ ही बुआई से पूर्व ट्राइकोडर्मा 2.5 किलोग्राम प्रति हैक्टर की दर से 500 कि.ग्रा. अच्छी सड़ी हुई गोबर की खाद में मिलाकर भूमि में मिलावें।

सफेद लट की रोकथाम हेतु क्लोथियानिडिन 50 डब्ल्यू डह.जी. 2. 0 ग्राम दवा प्रति किग्रा. बीज की दर से उपचारित कर बुआई करें। अन्त में राइजोबियम तीन पैकेट से बीज उपचारित कर बुआई करें।

बीज की मात्रा व बुआई :-झुमका किस्म का 100 किग्रा. बीज (गुली 30 ग्राम/100 दानें) प्रति हैक्टर बुआई करें। इन किस्मों में कतार से कतार की दूरी 30 सेमी. तथा पौधे से पौधें की दूरी 10 सेमी. रखें। फैलने वाली एवं अर्धविस्तारी किस्मों का 80 किग्रा. बीज (गुली 35 ग्राम/100 दानें) प्रति हैक्टर बुआई करें । इन किस्मों में कतार की दूरी 40 सेमी. तथा पौधे से पौधे की दूरी 15 सेमी. रखें। बुआई का उपयुक्त समय जून प्रथम सप्ताह से दूसरे सप्ताह तक है।

उर्वरक :-मूंगफली की फसल में प्रति हैक्टर 15 किग्रा. नाइट्रोजन, 60 किग्रा. फॉस्फोरस बुआई से पहले ऊरकर देवें। फॉस्फोरस अगर सिंगल सुपर फॉस्फेट से दिया जावे तो बेहतर होगा। सिंचित क्षेत्रों में बुआई से दो सप्ताह पूर्व प्रति हैक्टर 250 किग्रा. जिप्सम मिलाकर सिंचाई करें। जस्ते की कमी वाली भूमि में 30 किग्रा. जिंक सल्फेट व बोरोन की कमी वाली भूमि में 10 किग्रा. बोरेक्स प्रति हैक्टर बुआई से पहले ऊरकर देवें।

निराई-गुड़ाई :-खेत में से खरपतवार निकालते रहें। 30 दिन की फसल होने तक निराई–गुड़ाई पूरी कर लें। बुआई के एक माह बाद झुमका किस्म के पौधों की जड़ों पर मिट्टी चढ़ावें। जमीन में मुंगफली की सुईयाँ बनना शुरू होने के बाद निराई गुड़ाई न करें। जहाँ निराई गुड़ाई करना मुश्किल हो वहाँ मैटाक्लोर या पेण्डोमेथलीन एक किलो सक्रिय तत्व या ऑक्सीक्लोरफेन 1.50 ग्राम सक्रिय तत्व प्रति हैक्टर की दर से 600 लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करें। यह छिड़काव मूंगफली की बुआई के बाद किन्तु अंकुरण से पहले करना आवश्यक हैं खड़ी फसल में इमिजाथापार10 एस.एल. 50.0 ग्राम सक्रिय तत्व प्रति हैक्टर का बुआई के 25–30 दिन बाद 600 लीटर पानी का घोल बनाकर छिड़काव करें।

पौध वृद्धि :-मूंगफली की फसल में अधिक उपज के लिए 0.1 प्रतिशत थायोयूरिया अथवा 0.01 प्रतिशत थायोग्लाइकोलिक अम्ल घोल का छिड़काव 30 व 60 दिन की फसल अवस्था पर करें।

कीट एवं रोग प्रबन्धन :

सफेद लट :-यह लट मूंगफली की फसल में प्रमुख रूप से नुकसान पहुँचाती है। इसके द्वारा मुख्य जड़ को काट दिया जाता है जिससे पौधें की मृत्यु हो जाती है। कीट की प्रौढ़ अवस्था (बीटल) व लट की दोनों ही अवस्था नुकसान करती है। फसलों में लट द्वारा नुकसान होता है। जबकि पेड़ पौधों में प्रौढ़ द्वारा नुकसान होता है। इनकी रोकथाम निम्न प्रकार से करते हैं–

भृंग नियन्त्रण-मानसून या मानसून पूर्व की भारी वर्षा होने पर भृंग निकलते है। भृंग निकलने पर इसके पौषक पौधों जैसे नीम, खेजड़ी, बेर, अमरूद आदि पर प्रौढ़ की कीट को नष्ट करने के लिए इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एस.एस. का 1.5 मिलीलीटर प्रति लीटर पानी का घोल बनाकर पौधों वृक्षों पर प्रथम वर्षा वाले दिन छिड़काव करें।

लट नियन्त्रण :-बीजोपचार हेतु क्लोथियानिडिन 5.0 डब्ल्यू.डी.जी. 2.0 ग्राम प्रति किग्रा. बीज (गुली) या इमिडाक्लोप्रिड 600 एफ.एस. 6.0 मिली. प्रति किग्रा. बीज की दर से बीज उपचारित कर 2 घण्टे छाया में सुखा कर बुआई करें।

खड़ी फसल में सफेद लट के नियन्त्रण हेतु 300 मिली. इमिडाक्लोप्रिड 17.9 एस.एल. प्रति हैक्टर की दर से सुखी मिट्टी या बजरी में मिलाकर भुरकाव कर हल्की सिंचाई करनी चाहिए। यह उपचार मानसून की प्रथम अच्छी वर्षा के 21 दिन बाद ज्यादा संख्या में भृंगों के निकलने पर करें।

दीमक :-ये सूखे की स्थिति में जड़ों तथा फलियों को काटती है। जड़ कटने से पौधे सूख जाते है। फली के अन्दर गिरी के स्थान पर मिट्टी भर देती है। खड़ी फसल में दीमक के नियन्त्रण हेतु 300 मिली. इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एस.एल. प्रति हैक्टेयर की दर से सुखी मिट्टी या बजरी में मिलाकर भुरकाव कर हल्की सिंचाई करनी चाहिए।

मूंगफली कॉलर रोट :-अंकुरित हो रही मूंगफली इस रोग से प्रभावित होती हैं। प्रभावित हिस्से पर काली फफूंदी उग जाती है जो स्पष्ट दिखाई देती है। इसके लिए कार्बोक्सिन 37.5 प्रतिशत तथा थाइरम 37.5 प्रतिशत का 3 ग्राम प्रति किलो बीज की दर से उपचारित करना चाहिए।

ड्राईरूट रोट या चारकोल रोट :-नमी की कमी तथा तापक्रम अधिक होने पर यह बीमारी जड़ों में लगती है। जड़ें भूरी होने लगती है और पौधा सूख जाता है। इसके उपचार हेतु बीज शोधन करें, खेत में नमी बनाये रखे तथा लम्बा फसल चक्र अपनायें।

टिक्का एवं रोली रोग :-इन बीमारियों की रोकथाम के लिए रोग दिखाई देते ही प्रोपिकोनाजोल 25 ई.सी. 0.1 मिली. या हैक्साकोनाजोल 5 ई.सी. या टेबुकोनाजोल 25.9 ई.सी. 1.0 मिलीलीटर प्रति लीटर पानी के घोल का छिड़काव करें व 10–15 दिन बाद दोबारा दोहरावें।

पीलिया रोग :-इसके नियन्त्रण हेतु फॉस्फोरस सल्फेट 0.5 प्रतिशत घोल का फसल में फूल आने से पहले एक बार तथा फूल आने के बाद दुबारा छिड़काव करें।

विषाणु गुच्छा (क्लम्प वायरस) :-प्रकोप वाली जगह में जून के प्रथम पखवाड़े में बुवाई करना लाभप्रद रहता है। रोग ग्रसित क्षेत्र में बाजरे को पलटकर मूंगफली की बुवाई करें।

भण्डारण :-मूंगफली के बीज में 8–10 प्रतिशत से अधिक नमी होने पर बीज पर एस्परजिलस नामक फफूंद लग जाती है, जिससे एक विषैला पदार्थ (एफ्लाओक्सीन) जमा होना शुरू हो जाता है। इससे ग्रस्त बीजों को रखना घातक सिद्ध होता है।

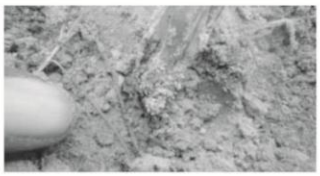

मूंगफली का गलकट (कॉलर रोट) रोग

मूंगफली का पीलिया रोग

बाजरे की फसल को रोगों से बचायें

डॉ. आर.एन. शर्मा एवं डॉ. बी.एस. चन्द्रावत
पौध व्याधि विभाग, श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि महाविद्यालय (श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि विश्वविद्याल), जोबनेर-303329 (राजस्थान)

बाजरा खरीफ के मौसम में बोई जाने वाली राजस्थान की प्रमुख फसल है। बाजरा राजस्थान में पशुओं के लिए हरे व सूखे चारे एवं मनुष्य के भोजन के लिए एक महत्वपूर्ण फसल है। इस फसल में बीज की बुआई से लेकर फसल पकने तक अनेक रोग नुकसान पहुँचाते हैं। यदि वातावरण में नमी की मात्रा अधिक रहे व तापमान भी कम बना रहे तो इन रोगों द्वारा उत्पादन में भारी गिरावट देखी जा सकती है। यदि इन रोगों की पहचान कर उचित समय पर रोकथाम के उपाय किये जायें तो फसल में होने वाले नुकसान को कम किया जा सकता है।

बाजरे की फसल में लगने वाले प्रमुख रोग एवं उनकी रोकथाम के उपाय इस प्रकार है :–

1. हरित आली (जोगिया) रोग :-यह एक फफूंद जनित (स्क्लेरोस्पोरा प्रमिनिकोला) रोग है जिसको राजस्थान में जोगिया रोग के नाम से भी जाना जाता है।

लक्षण :-इस रोग में 15–20 दिन के पौधों की पत्तियाँ पीली पड़ जाती है तथा इनकी निचली सतह पर सफेद कवक वृद्धि देखकर इस रोग को आसानी से पहचाना जा सकता है। साधारणताः पत्तियों पर एक दूसरे के समानान्तर पीली धारियां बन जाती हैं, जो पत्तियों की सम्पूर्ण लम्बाई और लगभग आधी चौड़ाई में फैल जाती है। फुटान की अवस्था में रोग ग्रसित पौधों में फुटान बहुत अधिक होती है एवं पौधें उनकी पर्वों की वृद्धि कम होने के कारण बौने एवं झाड़ीनुमा रह जाते हैं। इस रोग के प्रमुख लक्षण बाजरे की बाली पर दिखाई देते हैं जिससे दानों की जगह पूरी बाली या निचले भाग में छोटी ऐंठी हुई, बालदार हरी पत्तियों जैसी संरचनाएं बन जाती हैं।

रोकथाम के उपाय :

1. रोग प्रतिरोधी किस्मों जैसे : आरसीबी 2, राज 171, पीबी 106 (संकुल किस्में), आरएचबी 121, आरएचबी 127, आरएचबी 177, एचएचबी 67, प्रोएग्रो 9444 आदि (संकर किस्में) की ही बुआई के लिए चयन करें।
2. फसल की अगेती बुआई करनी चाहिए एवं कम से कम 5 वर्ष का फसल चक्र अपनाना चाहिए।
3. बीजों को बुआई से पहले मेटालेक्जिल 6 ग्राम प्रति किलो बीज की दर से उपचारित करके बोना चाहिए।
4. फसल में बीमारी के लक्षण दिखाई देते ही मेटालेक्जिल के 0.1 प्रतिशत या मैंकोजेब के 0.2 प्रतिशत घोल का छिड़काव करना चाहिए। छिड़काव को 10–15 दिन बाद दोहरावें।

2. बाजरे का चेंपा (अरगट) रोग :

लक्षण : इस रोग के लक्षण बालियों पर पुष्पन के समय दिखाई देते हैं। सबसे पहले यह रोग सिट्टों में दानों के पूर्व गुलाबी या हल्का मधु रंग की छोटी छोटी बूँदों के रूप में दिखाई देता है। यह मधु बिन्दु'' अवस्था कहलाती है। बाद मे फसल पकने के साथ ही मधु–रस गायब हो जाता है तथा बाली में सामान्य दानों के स्थान पर छोटी गहरे भूरे रंग की अनियमित संरचनायें (स्कलेरोशियम) बन जाती है।

रोकथाम के उपाय :

1. बाजरे की अगेती बुआई (जुलाई के प्रथम सप्ताह में) करें।
2. रोग ग्रसित खेत में अगले तीन वर्ष तक बाजरे की फसल न लेकर उसके स्थान पर ज्वार, मूँग या दूसरी फसल लेनी चाहिए।
3. गर्मियों में खेत की बार–बार गहरी जुताई करनी चाहिए।
4. बुआई हेतु सदैव स्वच्छ, स्वस्थ एवं स्क्लेरोशिम रहित बीजों को ही बुआई के काम लेना चाहिए। अगर बीज के साथ स्क्लेरोशियम मिले होने की संभावना लगे तो बीजों को नमक के 20 प्रतिशत घोल में (1 किलो नमक 5 लीटर पानी) लगभग 5 मिनट तक डुबोकर हिलायें, तैरते हुये बीजों का निकालकर नष्ट कर देवें तथा डुबे हुये बीजों को साफ पानी में धोकर छाया में सुखाकर बुआई से पूर्व बीजों को थायरम 2 ग्राम प्रति किलो बीज के हिसाब से उपचारित करके बोना चाहिए।
5. सिट्टे निकलते समय यदि आसमान में बादल छाये हो एवं हवा में नमी हो तो मैंकोजेब का 2 ग्राम प्रति लीटर के घोल का 2 से 3 छिड़काव 3 दिन के अन्तराल पर करना चाहिए।

3. कंडवा रोग :

लक्षण : बाजरे का यह रोग निषेचन की प्रक्रिया के दौरान होता है एवं दाना बनने के समय दिखाई देता है। रोग ग्रसित सिट्टे में दानों के स्थान पर चमकीले हरे या चाकलेट रंग के ''कंड सोरस'' जो कि आकार में सामान्य दाने से डेढ़ से दोगुने बड़े एवं अण्डाकार से टोपाकार होते हैं, दिखाई देते हैं। इन ''कंड सोरस'' का हरा रंग धीरे–धीरे गहरे भूरे काले रंग में बदल जाता है जिनको फोड़ने पर काला रंग का चूर्ण निकलता है जो कि रोगजनक के बीजाणु होते हैं।

रोकथाम के उपाय :

1. गर्मियों के दिनों में खेत की गहरी जुताई करना चाहिए।
2. बुआई के लिए हमेशा साफ–सुथरे व प्रमाणित बीजों का ही चयन करें।
3. कम से कम 2–3 साल का फसल चक्र अपनाना चाहिए।
4. बाजरे की फसल के साथ अन्तराशस्य के रूप में मूंग या मोठ का प्रयोग करना चाहिए।
5. खेत में जहाँ कहीं भी कंडवा ग्रसित सिट्टा दिखाई दे उसे निकालकर जला या गड्ढ़ा खोद कर दबा देना चाहिए।
6. सिट्टे निकलते समय यदि आसमान में बादल छाये हो या हवा में नमी हो तो 0.2 प्रतिशत कार्बोक्सिन या 0.1 प्रतिशत प्रोपीकोनाजाल का सिट्टे निकलते समय छिड़काव करें।

4. पत्ती धब्बा रोग :

लक्षण : पत्तियों पर सामान्य रूप से छोटे, नीले, जलशक्ति नाव जैसे तर्कुरूपी धब्बों के रूप में प्रकट होते हैं और इनके किनारे गहरे भूरे लाल रंग के तथा मध्य वाला भाग श्वेत धूसर अथवा राख जैसे रंग का होता है। मौसम के अनुकूल होने पर आपस में मिलकर पत्तियों को समय से पहले झुलसा देते हैं।

रोकथाम के उपाय : रोग के लक्षण दिखाई देते ही मैकोंजेब के 2 ग्राम प्रति लीटर का घोल छिड़काव करना चाहिए। आवश्यकता पड़ने पर 10–12 दिन के बाद छिड़काव दोहरावें।

5. रोली रोग : रोली रोग से पत्तियों पर लाल भूरे रंग के छोटे–छोटे धब्बे बनते हैं जो कि हाथ से रगड़ने पर हाथ लाल भूरा चूर्ण लग जाता है, जो बाद में काले रंग के हो जाते हैं।

रोकथाम के उपाय : रोग के लक्षण दिखाई देते ही मैकोंजेब के 2 ग्राम प्रति लीटर का घोल छिड़काव करना चाहिए। आवश्यकता पड़ने पर 10–12 दिन के बाद छिड़काव दोहरावें।

टिड्डी नियन्त्रण हेतु आवश्यक दिशा निर्देश

शिवानी चौधरी[1], डॉ. बी.एल. जाट[2] एवं डॉ. के.सी. कुमावत[2]
स्नातकोत्तर[1] एवं आचार्य[2], कीट विज्ञान विभाग
श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि महाविद्यालय, जोबनेर

राजस्थान प्रदेश में पिछले कई दिनों से टिड्डी दलों का आगमन हो रहा है तथा फसलों व पेड़ पौधों को नुकसान पहुंचाया जा रहा है। टिड्डी दलों के पड़ाव को रोकने व नियन्त्रण हेतु निम्नांकित उपाय किसानों को सामूहिक रूप से करने चाहिए :–

1. टिड्डी दलों की सतत् निगरानी रखना अति आवश्यक है।
2. टिड्डी दल के आगमन पर खेतों में ढोल, थाली एवं अन्य ध्वनि यंत्रों से तेज आवाज उत्पन्न करनी चाहिए, ताकि व फसलों पर पड़ाव न डाल सकें।
3. टिड्डी दल के आगमन पर तुरन्त कृषि विभाग को सूचित किया जाना चाहिए, ताकि सरकारी स्तर पर किये जाने वाले नियन्त्रण कार्यों को समुचित रूप से अंजाम दिया जा सकें।
4. टिड्डियों के पड़ाव डालने पर इन्हें कांटेदार छड़ियों से मारना चाहिए एवं परती भूमि में मशाल जलाकर अथवा फ्लेम थ्रोवर द्वारा जलाना चाहिए।
5. रात्रि के समय सामूहिक रूप से कृषि विभाग एवं अन्य अधिकारियों के साथ पेड़–पौधों पर अनुमोदित कीटनाशकों का 2.00 मध्यरात्रि उपरान्त से सुबह 7.00 बजे तक छिड़काव कार्य करना चाहिए। पानी की उपलब्धता या अनुपलब्धता के आधार पर क्रमशः छिड़काव अथवा भुरकाव कार कार्य पावर स्प्रेयर या पावर डस्टर की सहायता से करें। खाली भूमि या परती भूमि या वन क्षेत्र में ड्रोन द्वारा लो वोल्यूम स्प्रे किया जा सकता है।
6. टिड्डी दलों के पड़ाव स्थल प निगरानी रखनी चाहिए, क्योंकि इन स्थानों पर कुछ टिड्डियां बच जाती है, जो कि अण्डे दे सकती है। अतः इनको भी नष्ट करना अति आवश्यक है।
7. जहां टिड्डियां अण्डे दे देती है वहां पर अनुकूल परिस्थितियों में होपर निकलने की संभावना रहती है। यदि होपर निकल रहे हो, तो ऐसे स्थानों पर छिड़काव या भुरकाव कार्य करें। ये होपर अति क्रियाशील होते है, जो एक खेत से दूसरे खेत में पहुंच कर नुकसान पहुंचाते है। ऐसी स्थिति में खेत के चारों ओर 60 सेमी. गहरी एवं 45 सेमी. चौड़ी खाई खोदें।
8. होपर खाई में गिर जायें एवं बाहर न निकल सकें। खाई में पड़े होपर्स को कीटनाशक के छिड़काव या भुरकाव द्वारा नष्ट कर दें।
9. खड़ी फसल में टिड्डियों से फसल को बचाने हेतु नीम बीज घोल 0.5 प्रतिशत अथवा नीम आधारित कीटनाशक (0.03 प्रतिशत या 0.15 प्रतिशत) का छिड़काव करें।
10. कीटनाशक का छिड़काव पौध सुरक्षा किट पहनकर ही करें ताकि कोई जहरीला असर न पड़े।
11. एक व्यक्ति 3–4 घण्टे से ज्यादा समय तक छिड़काव या भुरकाव कार्य न करें।
12. कीटनाशकों का छिड़काव या भुरकाव हवा की गति को ध्यान में रखते हुये करें। हवा के विरूद्ध दिशा में छिड़काव या भुरकाव कार्य न करें।

13. जिन क्षेत्रों में कीटनाशकों का छिड़काव किया गया है, उनमें 7–10 दिन तक पालते पशुओं को चरने हेतु न छोड़े। चारे वाली फसलों को भी 7–10 दिन तक छिड़काव या भुरकाव उपरान्त पालतू पशुओं को न खिलावें।

टिड्डी नियन्त्रण हेतु अनुमोदित कीटनाशक :

1.	क्लोरपायरीफॉस 20 ई.सी.	1.2 ली./है.
2.	क्लोरपायरीफॉस 50 ई.सी.	480 मिलीं.है.
3.	डेल्टामेथ्रिन 2.8 ई.सी.	450 मिली./है.
4.	डेल्टामेथ्रिन 1.25 यूएल.वी.	200 मिली./है.
5.	डाईफ्लूबेन्जूरॉन 25 डब्ल्यू.पी.	240 ग्राम/है.
6.	फिप्रोनिल 5 एस.सी.	125 मिली./है.
7.	फिप्रोनिल 2.92 इ.सी.	216 मिली./है.
8.	लेम्डा साइहेलोथ्रिन 5 ई.सी.	400 मिली./है.
9.	लेम्डा साइहेलोथ्रिन 10 डब्ल्यू.पी.	200 ग्राम/है.
10.	मैलाथियॉन 50 ई.सी.	1.85 ली./है.
11.	मैलाथियॉन 25 डब्ल्यू.पी.	3.7 किग्रा./है.
12.	मैलाथियॉन 5 प्रतिशत डस्ट	25 किग्रा./है.
13.	फेनवलरेट 0.4 प्रतिशत डस्ट	25 किग्रा./है.
14.	क्यूनालफॉस 1.5 प्रतिशत डस्ट	25 किग्रा./है.

पशुपालन से बचेगी खेती

विनोद कुमार कुड़ी (वरिष्ठ अनुसंधान अध्येता, श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर), सोहन लाल बूरी (प्रयोगशाला सहायक, कृषि अनुसंधान केन्द्र, केशवाना, जालौर) एवं मन्जू नेटवाल

खेती और पशुपालन का रिश्ता आज टूट रहा है, लेकिन अगर इसको बरकरार रखा जाये तो न केवल हमें भूमि को उपजाऊ बनाने के लिए गोबर खाद मिलेगी बल्कि बड़ी आबादी को रोजगार भी मिलेगा। पशु शक्ति के बारे में कई विशेषज्ञ व वैज्ञानिक भी यह मानने लगे है कि यह सबसे सस्ता व व्यावहारिक स्रोत है। भारत समेत सारी दुनिया में आज भी खेती और पशुपालन ही सबसे ज्यादा रोजगार देने वाले क्षेत्र है। ग्रामीण अर्थव्यवस्था केवल खेती किसानों से ही नहीं, पशुपालन और छोटे–छोटे लघु–कुटीर उद्योग व लघु व्यवसायों से संचालित होती रही है।

बीमारियों से बचाव, उपचार करने की तुलना में बेहतर है– पशुपालकों को प्रतिदिन अपने पशुओं का ध्यान पूर्वक निरीक्षण करना चाहिए। अस्वस्थ पशुओं का पता लगते ही तुरन्त अपने ज्ञान एवं अनुभवों के आधार पर उपचार कर सकें तो प्राथमिक उपचार कर उसके बाद शीघ्र पशु चिकित्सक से सम्पर्क करना चाहिए।

पशुपालक अपने पशु की अस्वस्था को पहचान सकते है :– रोगी पशु अपने झुण्ड से अलग खड़ा रहता है। खाने पीने में कमी आ जाती है तथा जुगाली करना बन्द कर देते हैं। पशु की खुरदरी तथा शुष्क त्वचा बीमारी की सूचक होती है। बालों का गिरना, बालों का बड़ा होना, पशु के थूथन तथा नाक से कोई द्रव पदार्थ नहीं निकलना चाहिए। रोगी पशु की आंखे घसी हुई स्थिर तथा घूरती हुई मालूम पड़ती है। पशु का पेशाब गहरा पीला या खूनी होना अथवा उसका दुर्गन्धमय होना रोग के मुख्य कारण है। दुधारू पशुओं में पानी की कमी का सीधा प्रभाव गर्भित पशुओं में बच्चों की बढ़वार एवं दुग्ध उत्पादन पर पड़ता है। पशुओं को पानी की जरूरत सूखे चारे, सूखे दाने, गर्मी, सर्दी तथा बरसात व दूध उत्पादन क्षमता के हिसाब से होती है।

गाय–भैंसों में थनैला रोग :–रोगी पशु के थन सूज जाते हैं तथा उनमें गांठे पड़ जाती हैं। दूध दुहते समय पशु को दर्द व बैचेनी होती है। दूध पतला एवं रक्त–मवाद युक्त होता है। दुग्ध दोहन से पहले या बाद में हाथों को एन्टिसेप्टिक घोल से धोकर पोंछ लेना चाहिए। पशु के बांधने की जगह को स्वच्छ रखना चाहिए। दूध दोहने का सही तरीका अपनायें। स्वस्थ पशुओं का दुग्ध दोहन पहले तथा थनैला रोग से ग्रस्त पशु का दुग्ध बाद में निकाले। रोग ग्रस्त पशुओं को स्वस्थ पशु से अलग रखें। दुधारू गाय–भैंस जब दूध देना बन्द कर दें, उसके चारों थनों में दवा का एक–एक ट्यूब भरकर छोड़ दें तथा पशुओं को विटामिन ''ई'' एवं सेलेनियम युक्त खनिज मिश्रण खिलायें। गाय–भैंस के थनों से खून अथवा मवाद, सूजन आ जाये तो बर्फ की मालिश करनी चाहिए तथा फिर उस पर कालीजीरी का लेप कर देना चाहिए। पशु को एक पाव नींबू का रस तथा एक पाव तिल्ली का तेल मिलाकर सुबह–शाम 2–3 दिन पिलाने से अति शीघ्र आराम मिलता है।

खुरपका मुंहपका रोग :–रोग ग्रस्त पशु को 104–106 डिग्री फारेनहाइट तक बुखार हो जाता है। तेज बुखार के कारण पशु के मुंह के अन्दर, गालों, जीभ, होंठ, तालू व मसूड़ों के अन्दर, खुरों के बीच तथा कभी–कभी थनों व अयन पर छाले पड़ जाते हैं। दुग्ध उत्पादन में कमी आ जाती है। इस रोग का कोई विशेष उपचार के लिए एन्टीबायोटिक टीके लगाये जाते हैं। मुंह में बोरो–ग्लिसरीन तथा खुरों में किसी एन्टीसेप्टिक लोशन या क्रीम का प्रयोग किया जाता है। इस बीमारी से बचाव हेतु पशुओं को पोलिवेलेट वेक्सीन के वर्ष में दो बार टीके अवश्य लगवाने चाहिए।

दुधारू पशुओं का चयन :–

1. पशु पालक /पशु चिकित्सक आदि की सहायता से स्वस्थ एवं अधिक उत्पादन वाला पशु ही खरीदे।
2. हाल ही में ब्याई, 2 अथवा 3 ब्यांत के पशु को ही खरीदना चाहिए।
3. पशु खरीदने से पहले लगातार 3 समय के दूध को निकालकर देख लेना चाहिए।
4. खरीदे गये पशु को तुरन्त रोगों से बचाव के टीके लगवाने चाहिए।
5. भैंस को जुलाई से फरवरी के मध्य खरीदना ठीक रहता है। क्योंकि भैंस बच्चे को देने में सीजनल है।
6. पुराने पशुओं की 6 ब्यांत के बाद छंटनी कर देनी चाहिए तथा कम उत्पादक अथवा अनुत्पादक पशुओं की भी समय–समय पर छंटनी करते रहना चाहिए तथा उनकी जगह नये पशुओं

को रखना चाहिए।

पशु आवास :-

1. पशुशाला का निर्माण ऊँचे एवं हवादार स्थान पर करें।
2. पशु के खड़े होने का स्थान आगे से पीछे की ओर ढाल वाला हो एवं खुरदरा होना चाहिए।
3. पशुशाला की छत 2.25 मीटर ऊँची होनी चाहिए।
4. पशुशाला में हवा के लिए उचित खिड़कियां होनी चाहिए।
5. पशुशाला की प्रतिदिन सफाई करनी चाहिए।

संतुलित पशु आहार :-पशु का वह भोजन, जिसमें प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट, वसा, विटामिन व खनिज मिश्रण उचित अनुपात व मात्रा में हो तथा जो जीवन निर्वाह, उत्पादन एवं सभी आवश्यकताओं की पूर्ति करता है उसे सन्तुलित भोजन (Balance Ration) कहते है। पशु आहार का 2/3 भाग मोटे चारे से व 1/3 भाग दाने से पूर्ति करना चाहिए। पशुपालक निम्नलिखित अवयव से सन्तुलित पशु आहार तैयार कर सकते हैं–

मिश्रण :-उपरोक्त पशु खाद्य अवयव को मोटा दलकर (Griding) के उपरान्त ही उपयोग लेने से पाचकता बढ़ती है। पशु आहार जीवन निर्वाह के साथ उत्पादन तथा गर्भावस्था के अतिरिक्त दाना देना चाहिए।

मात्रा:-दुधारू गाय को जीवन निर्वाह 2 किलो/पशु/प्रतिदिन व इससे अतिरिक्त 2.5 ली. दूध पर 1 किलो दाना व 5वें माह के उपरान्त गर्भावस्था का 1.25 किलों अतिरिक्त दाना दिया जाना चाहिए।

प्रो. बी.एल. ककरालिया
प्रसार शिक्षा निदेशक

निदेशक की कलम से

जुलाई माह के कृषि कार्य

प्रिय किसान भाईयों,

जुलाई माह की कृषि क्रियाओं को ध्यान में रखतें हुये हम खेत में खरीफ फसल उत्पादन, बागवानी एवं सब्जियों की फसलों का ध्यान देना बहुत आवश्यक है। फसलोत्पादन में बाजरा, ग्वार, मूंग, ज्वार, मक्का के साथ उड़द, चँवला या सोयाबीन की मिश्रित फसले लेवें। मूंगफली की झुमका किस्म के पौधों पर बुवाई के एक माह बाद मिट्टी चढ़ावें तथा बाजरे की फसल में बीजों को गुंदिया या चेपा रोग से बचाव के लिए नमक के 20 प्रतिशत घोल (1 किलो नमक में) 5 लीटर पानी में लगभग पांच मिनट तक डुबोकर रखें। तैरते हुये कचरे एवं हल्के बीजों को निकाल देवें बचे हुये बीजों को निथार कर साफ पानी से धो लें। उसी प्रकार जैसे मक्का की फसल की बुवाई भी मानसून आगमन के साथ करें। 20–25 किलो प्रमाणित बीज का ही उपयोग करें। उसी प्रकार दलहनी फसलों की बुवाई जैसे मूंग, चँवला, मोठ एवं उड़द आदि फसलों की बुवाई मानसून की वर्षा होने के साथ–साथ या वर्षा देरी से हो तो 30 जुलाई तक भी की जा सकती है। सभी दलहनी फसलों के पौधे अपनी जड़ों से बैक्टीरिया द्वारा वायुमण्डलीय नत्रजन का स्थिरीकरण कर भूमि की उर्वरा शक्ति को बढ़ाते है। बागवानी में तैयार किये गड़ढ़ों में फलदार पौधे जैसे बेर, आंवला, नींबू, पपीता, अमरूद, अनार, आम एवं बील आदि को लगायें। सब्जियों में टमाटर, मिर्च, बैंगन, फूलगोभी, तुरई, टिण्डा, ककड़ी आदि में फल छेदक कीट के नियंत्रण हेतु प्रभावित फसलों को तोड़कर भूमि में गाड़कर नष्ट कर देना चाहिए तथा मैलाथियॉन 50 ई.सी. एक मिली. दवा प्रति लीटर पानी के घोल का छिड़काव करें एवं कम से कम 3 दिन तक फल खाने के काम में नहीं लेवें। बरसात के मौसम में गैंदा, बाल्सम, जीनिया आदि फूलों की पौध तैयार करें। गुलदाउदी, मोगरा, चमेली की कलमें भी लगाई जा सकती है। कृषि क्रियाओं को ध्यान में रखकर उत्पादन को काफी हद तक बढ़ाया जा सकता है क्योंकि कृषि क्रियाएं समय पर नहीं करने पर हमें कई बार काफी नुकसान हो जाता है। हमारे यह कृषि प्रौद्योगिकी सूचना केन्द्र पर नर्सरी में सब्जियों की पौध, फलदार और छायादार पौधे उचित दरों पर किसानों को उपलब्ध कराये जाते हैं। इस माह सभी किसान भाईयों से निवेदन है कि मानसून सत्र में सघन वृक्षारोपण कार्यक्रम, फलदार वृक्षरोपण कार्यक्रम अपने खेतों की सीमाओं तथा उद्यान विभाग के माध्यम से अनुदान पर फल विशेष का बगीचा लगावें। वर्षा के पानी तथा घरों की छतों का पानी को संरक्षित करें तथा कृषि विभाग की योजनाओं के माध्यम से जल हौद, फव्वारा सिचांई, मिनी स्प्रींकलर, बूंद–बूंद सिंचाई पद्धति को अपनाएं तथा जल संरक्षण कार्यक्रम में सहयोग करें।

प्रमुख संरक्षक	:	**प्रो. जे. एस. सन्धू**
संरक्षक	:	**डॉ. बी. एल. ककरालिया**
समन्यवक	:	**डॉ. आर. एन. शर्मा**
प्रधान सम्पादक	:	**डॉ. के.सी. कुमावत**
तकनीकी परामर्श	:	**डॉ. सुदेश कुमार**
		डॉ. महेश दत्त
		डॉ. एम.आर. चौधरी
		डॉ. आर. पी. घासोलिया
		डॉ. डी. के. जाजोरिया
		डॉ. सन्तोष देवी सामोता

बुक पोस्ट

डाक टिकट

पत्रिका सम्बन्धी आप अपने सुझाव, आलेख एवं अन्य कृषि सम्बन्धी नवीनतम जानकारियाँ हमारे मेल jobnerkrishi@sknau.ac.in पर भेजे।

प्रकाशक एवं मुद्रक : निदेशालय, प्रसार शिक्षा, श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर के लिए अम्बा प्रिन्टर्स, जोबनेर से मुद्रित।